18

निर्ग्रन्थों का मार्ग...

निर्ग्रंथों का मार्ग हमको प्राणों से भी प्यारा है ...
दिगम्बर वेश न्यारा है...निर्ग्रन्थों का मार्ग ....।।

शुद्धात्मा में ही, जब लीन होने को, किसी का मन मचलता है,
तीन कषायों का, जब राग परिणति से, सहज ही टलता है,
वस्त्र का धागा...वस्त्र का धागा नहीं फिर उसने तन पर धारा है,
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग...

पंच इंद्रिय का विस्तार नहीं जिसमें, वह देह ही परिग्रह है,
तन में नहीं तन्मय, है दृष्टि में चिन्मय, शुद्धात्मा ही गृह है,
पर्यायों से पार... पर्यायों से पार त्रिकाली ध्रुव का सदा सहारा है,
दिगम्बर वेश न्यारा है...निर्ग्रन्थों का मार्ग....

मूलगुण पालन, जिनका सहज जीवन,निरन्तर स्व-संवेदन,
एक ध्रुव सामान्य में ही सदा रमते, रत्नत्रय आभूषण,
निर्विकल्प अनुभव...निर्विकल्प अनुभव से ही जिनने निज को श्रंगारा है,
दिगम्बर वेश न्यारा... निर्ग्रन्थों का मार्ग...।।

आनंद के झरने, झरते प्रदेशों से,ध्यान जब धरते है,
मोह रिपु क्षण में, तब भस्म हो जाता, श्रेणी जब चढते हैं,
अंतर्मुहूर्त में.अंतर्मुहुर्त में ही जिनने अनन्त चतुष्टय धारा है,
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग.... ।।

हमें सकल परिग्रह त्यागी दिगम्बर मुनीश्वरों का मार्ग अपने प्राणों से भी अधिक प्यारा है और उनकी दिगम्बर मुद्रा भी अत्यंत प्यारी है।

जब किसी साधक जीव का मन शुद्धात्मा में लीन होने का पुरूषार्थ करता है तब उसकी परिणति से अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्या- नावरण, प्रत्याख्यानावरण इन तीन कषाय चौकड़ी का अभाव सहज हो जाता है और अंतरंग में शुद्धोपयोग की अति निर्मल दशा होने पर बहिरंग में समस्त प्रकार के परिग्रह का त्याग हो जाता है अर्थात् परम दिगम्बर निर्ग्रन्थ दशा हो जाती है।

ऐसे शुद्धापयोगी मुनिराज का उपयोग पंच इन्द्रियों के विषयों नहीं जाता, उनके लिये परिग्रह के रूप में मात्र देह ही है। शरीर के साथ होने पर भी वे मुनिराज शरीर में एकत्व नहीं करते, उनके लिये एकमात्र चितस्वरूपी आत्मा ही उपादेय है और वे अपनी आत्मा में ही निवास करते हैं। ऐसे मुनिराजों के लिये पर्यायों से पार त्रिकाली ध्रुव आत्मा ही शरणभूत है।

वीतरागी मुनिश्वरों के जीवन में मूलगुणों का पालन सहज ही होता है उसके लिये उन्हें विकल्प नहीं करना पड़ता, वे निरन्तर आत्मा की अनुभूति करते हैं, वे सदा धुव्र आत्मा में ही रमण करते हैं, उनके लिये सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र ये रत्नत्रय ही श्रृंगार है और उन्होंने समस्त विकल्पों से परे आत्म अनुभव से ही अपना श्रृंगार किया है।

वीतरागी मुनिराज जब अपनी आत्मा का ध्यान करते हैं तो उनके आत्म प्रदेशों से निरन्तर आनन्द का झरना झरता है अर्थात् वे अतीन्द्रिय आनन्द का प्रचुर भोग करते हैं, शुद्धात्मा की एकाग्रता बढ़ने से क्षपक श्रेणी आरोहण करते हैं जिससे उनके चारित्र मोहनीय का सम्पूर्णतया नाश होता है और मात्र अंतमुहूर्त में ही वे अरहंत पद को प्राप्त करते हैं और उनके अनन्त चतुष्टय प्रगट होता है।